प्रथम अध्याय

उपेन्द्रनाथ "अश्क" जी का व्यक्तित्वपरिचय एवं सृजन

"अश्क" जी आज हम लोगों में नहीं रहें, मगर उनका अक्षय कीर्तिमान सृजनात्मक साहित्य हमारे बीच सदा से आकर्षण बनकर रहा है। उन्होंने हिन्दी साहित्य की गद्यात्मक एवं पद्यात्मक विधाओं के क्षेत्र में बहुमुखी रचनात्मक प्रतिभा का परिचय देने की दृष्टि से उनका नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय रहेगा। अश्क जी के सृजनात्मक साहित्य में उपन्यास, कहानी संग्रह, काव्य, नाटक, एकांकी, संस्मरण तथा रेखाचित्र बहुसंख्यक कृतियाँ उपलब्ध हैं। साथ ही साथ अनेक स्फुट रचनाएँ तथा उनके सम्यक साहित्य का मूल्यांकन करने की दिशा में प्रस्तुत की गयी अधिकांश आलोचनात्मक निबंधों के रूप में समय-समय पर हिन्दी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं। अश्क जी अपने दैनिक जीवन में मिलनसार, सौम्य, मधुरभाषी, उदारचेता एवं विषम पारिवारिक परिस्थितियों के होते हुए भी उनके होठों पर सदैव मंद मुस्कान अपना अधिपत्य स्थापित रखती है। अश्क जी का बाह्य वर्णन इस प्रकार दिखायी देता था - फेल्ट हॅट, जो सिर पर जान-बूझकर टेढ़ा रखा हुआ है, बायें हाथ पर झूलता ओवर कोट: स्वेटर, जवाहर कट कोट, और मफलर साथ ही दायें हाथ में ब्रीफकेस, चश्मे के पीछे से झाँकती आँखे और उनके नीचे उभरी हुई हड्डियाँ जो उनके व्यक्तित्व का आकर्षक उद्घोष करती हैं। देखनेवाले बरबस उधर खिंचे चले जाते। बचपन से ही घर में कलह और अत्यधिक बीमारी ग्रस्त रहने के फलस्वरूप नियमित रूप से अध्ययन करने में असमर्थ रहे। फिर भी विघ्न एवं बीमारी के उपरान्त भी "अश्क" जी को एक अभूतपूर्व शक्ति का आभास होता। लेखन प्रेरणा इन्हें अपने आस-पास का कलुषित वातावरण और उनकी अति भ्रमण स्वानुभूति के फल स्वरूप हुई। अश्क जी को कारयत्री प्रतिभा जन्मजात प्राप्त हुई थी। उन्होंने साहित्य के विभिन्न अंगोपर लेखन कर एक महान साहित्यकार के रूप में अपनी अमिट छाप छोड़ दी है। अपना लेखन कार्य उर्दू से आरंभ कर दिया था मगर प्रेमचंद आदि लोगों के सानिध्य में आकर और

उनसे प्रेरणा पाकर हिन्दी में लेखन आरंभ कर दिया। हिन्दी उपन्यास साहित्य में गिरती दीवारे, शहर में घूमता आईना, एक नन्हीं किन्दील, बाँधो न नाव इस ठाँव में नायक चेतन बनकर तो निमिषा उपन्यास नायक गोविन्द बनकर अश्क जी ने अपनी ही आपबीती बताई है। उपर्युक्त उपन्यासों की शृंखला अश्क जी के जीवन का परिचय हमें दे देती हैं। जब भी इन्होंने लेखनी उठायी है तब अपना तथा अपने आस-पास के वातावरण का परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

जन्म तथा परिवार :

१४ दिसम्बर, १९१० को उपेन्द्रनाथ अश्क अपने साथ एक महान लेखन शक्ति को लेकर पंजाब प्रान्त के जालन्धर नामक नगर में एक मध्य वित्त ब्राहमण परिवार में अवतरित हुए थे। "अश्क ने स्वयं अपने सात भाइयों का उल्लेख किया है। ये छः भाइयों में दूसरे हैं। शिक्षा जालन्धर से प्रारम्भ हुई थी। जब यह : १९२४ में आठवीं कक्षा में विध्यार्थी थे तभी अत्यधिक बीमार हो गये और आठ नौ महिनों तक लगातार मलेरिया से पीड़ित रहे तो डाक्टरों ने इन्हें जलवायु बदलने का परामर्श दिया। अपना अध्ययन स्थगित कर आप पिता के पास चले गये जो पंजाब के एक गुमनाम से कस्बे 'दसुआ' में स्टेशन मास्टर थे।"[1]

शिक्षा एवं महत्त्वाकांक्षा :

"दसुआ की जलवायु में इनका स्वास्थ्य ठीक होने लगा। अध्ययन तो छूट ही गया था अतः स्टेशन पर दिन-दिन घूमा करते, कभी पास के बागों में चले जाते और तालाब के किनारे शहतूत के पेडों की छाया में लेटे रहते थे। कुछ महिनोंपरांत पुनः जालन्धर लौट आये। यहाँ एंग्लो संस्कृति हाई स्कूल की प्राइमरी शाखा में सीधे तीसरी कक्षा में प्रवेश करा दिये गये क्योंकि इनकी माँ घर पर स्वयं पहले से

१ डॉ. अहिबरन सिंह - "अश्क" का कथासाहित्य - पृ. १०

पढ़ाती रही थी। यहीं के स्थानीय कालेज से मैट्रिक एवं डी. ए. बी. कालेज से सन् १९३१ में बी. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की थी।"[१]

अश्क बचपन से ही स्वप्नजीवी थे। कभी अध्यापक, लेखक, संपादक तो कभी वक्ता या वकील बनने इच्छा करते, अभिनेता और डायरेक्टर बनने का सोचा करते। जब अश्क ने बी. ए. पास किया तो अपने स्कूल में अध्यापक नियुक्त हो गये पर दो साल उपरान्त उससे त्याग पत्र दे दिया। बाद में जीविकोपार्जन हेतु उन्होंने साप्ताहिक "भूचाल" का संपादक और फिर साप्ताहिक "गुरु घंटाल" के लिए कहानी लेखन का कार्य किया।

अश्क जी कहीं भी एक जगह टीक नहीं सके। उन्होंने सन १९३४ में ला कालेज में प्रवेश लिया और सन् १९३६ में प्रथम श्रेणी में ला पास कर लिया। मगर इसी वर्ष लम्बी बीमारी के कारण प्रथम पत्नी की मृत्यु हो जाने से कचहरी जाना या अन्य नौकरी करने का विचार ही छोड़ दिया। यहीं से अश्क के जीवन में अभूतपूर्व मोड़ आया। उन्होंने साहित्यिक सेवा करने का अपने जीवन का उद्देश्य बनाया और यहीं से अश्क के लेखन का महत्त्वपूर्ण युग आरंभ हो गया।

दूसरी शादी :

प्रथम पत्नी की मृत्यु हो जाने के बाद दूसरी शादी करने की "अश्क" की कतयी इच्छा नहीं थी मगर परिस्थिति वश एक स्कैण्डल में फँस जाने के कारण बड़े भाई से कहलवा के अनिच्छा से दूसरा ब्याह किया मगर पत्नी से बेबनाव के कारण आठ-दस महिनों बाद उसे छोड़ कर तीसरा विवाह कौशाल्या अश्क से किया। कौशाल्या जी सफल पत्नी बनकर "अश्क" के जीवन में आयी और यहीं से उनकी रचना प्रक्रिया को और भी बढ़ावा मिल पाया।

आकाशवाणी एवं चलचित्र जगत में :

सन् १९४२ के शुरु में अश्क जी ने आल इंडिया रेडियो में परामर्शदाता के

---

१ डॉ. अहिबरन सिंह - "अश्क" का कथासाहित्य - पृ. १०

रूप में नौकरी स्वीकार की। यहाँ पर वे पूरे तीन साल तक रहें। इसी दौरान उन्होंने कबीरदास, तुलसीदास, मर्यादा पुरुषोत्तम राम, भगवान बुद्ध, उर्मिला और निर्मला आदि रेडियो नाटक लिखे। "मर्यादा पुरुषोत्तम राम" का रेकार्ड बी॰बी॰सी॰ लंडन से भी ब्राडकास्ट किया गया था। इसके बाद अश्क जी ने सन १९४५ के आखिर में बम्बई के फिल्म जगत के निमन्त्रण स्वीकार कर वहाँ पर फिल्मों में लेखन का कार्य किया। फिल्मी जगत में अश्क दो वर्ष रहें। इन्हीं दो वर्षों के दरम्यान उन्होंने नीतिन बोस के फिल्म "मजदूर" और बी॰ मित्रा के फिल्म "सफर" के डायलाग के साथ-साथ संवाद निर्देशन का काम भी किया। इसी वर्ष के फिल्मों में "मजदूर" के संवाद सर्वश्रेष्ठ समझे गये और "सफर" भी "बाक्स आफिस" पर हिट साबित हुई। साथ ही फिल्म "मजदूर" और "आठ दिन" नामक फिल्म में अभिनय भी किया, जो बचपन की एक चिर अभिलाषा की कुछ हद तक पूर्तता भी हुई। मगर वास्तविकता की जानकारी जब अश्क जी को हुई तब वह अधिक कटु थी। अश्क जी ने एक जगह पर लिखा है कि मैं वहाँ पर अपनी प्रतिभा का वेश्या व्यवसाय कर रहा था। और इसी कटु अनुभव के कारण ही उन्होंने फिल्मी जगम को नमस्कार किया।

यक्ष्मा-बीमारी :

दिसम्बर, १९४६ में इन्हें यक्ष्मा हो गया। इस घातक बीमारी से भी इन्हें शीघ्र छुटकारा न मिला। अन्ततोगत्वा अप्रैल, १९४७ में इनकी पत्नी "कौशल्या अश्क" इन्हें महाराष्ट्र के पाँचगनी ले गयी और सेनेटोरियम में प्रवेश करा दिया। यहाँ इन्हें छः माह तक कुछ भी लेखन कार्य करने की अनुमति नहीं प्राप्त हुई, फिर भी यह कुछ कविताएँ आदि लिखते रहें। छः माह बाद इनका उस सेनेटोरियम से निष्कासन हुआ और स्वास्थ्य भी धीरे-धीरे सुधरने लगा। इन्हीं दिनों विभाजन एवं दंगे आदि भी होने लगे जिससे अश्क को महान दुःख होता था। इसकी हलकी झलक इनकी प्रसिध्द कहानी "टेबल लैंड" मे प्राप्त होती हैं।"[1]

---

१ डॉ॰ अहिबरन सिंह - "अश्क" का कथासाहित्य पृष्ठ ११/१२

सन १९४८ से १९५३ तक अश्क दम्पति के जीवन में संघर्ष के वर्ष रहे। जुलाई सन १९४८ में पाँचगनी होते हुए इलाहाबाद आ गये। यहाँ आकर ज्ञात हुआ कि मकानों की बड़ी कठिन समस्या है। सामान अधिक होने के कारण इन्हें अतिरिक्त कठिनाई का सामना करना पड़ा। तेरह बक्स तो केवल पुस्तकों के थे साथ ही बीबी बच्चे भी। यहाँ यह स्वर्गीय प्रेमचंद के बड़े पुत्र श्री पतराय के साथ १४ हेस्टिंग्ज पर रहते रहें। यहीं नीलाभ प्रकाशन गृह की व्यवस्था की जिससे उनके सम्पूर्ण साहित्यिक व्यक्ति को रचना और प्रकाशन दोनों दृष्टियों से सहज पथ मिला।"[1]

अश्क जी इलाहाबाद आ जाने के बाद उनकी बचपन की एक चिर अभिलाषा की पूर्तता होने लगी। अश्क बचपन में बड़ा लेखक और संपादक बनने के सपने देखा करते थे। यहाँ का पूरा वातावरण उनके छंद के अनुकूल ही था। और यहीं से उनके लेखन और संपादन के वास्तविक युग की शुरुआत होती दिखायी देती है।

माता - पिता :

"अश्क" के पिता पंडित माधोराम [स्टेशन मास्टर] बड़े विलासप्रिय व्यक्ति थे। ईश्वर अनुकंपा से गला भी उन्होंने अच्छा पाया था। उत्तरदायित्व-पूर्ण अधिकारी होते हुए भी फक्कड़, दबंग, खाने पीने और जीनेवाले, मस्त मौला बेपरवाह आदमी थे। उन्हें इस बात की चिंता न थी कि हमारे यह सात-सात बच्चे क्या कर रहें हैं। उन पर नौकरी, बीबी बच्चों किसी का सुधारक प्रभाव नहीं पड़ा। ऐसा शायद ही कोई स्टेशन हो जहाँ पर उन्होंने दो चार मुकदमें न लड़े हो। इसके विपरीत अश्क की माता जी ममता, सब्र और संतोष की साक्षात देवी थी। वह दु:खों व गमों की मारी हुई, सहानुभूति एवं उदारता, सन्तान स्नेह और सच्ची पतिनिष्ठा की प्रतिमूर्ति थी। एक बार पति के परम मित्र श्री धर्मचन्द्र के साथ बीस-पच्चीस आदमियों के अचानक आ जाने पर तीन बजे रात को सभी को भोजन कराया था। उनके चेहरे पर किसी प्रकार की

---

१ डॉ. अहिबरन सिंह - "अश्क"का कथा साहित्य- पृ. १२

शिकायत न थी वरन् संपूर्ण कार्य विधिवत् संपन्न हो जाने के कारण उनके मुँह पर अतीव प्रसन्नता थी।"[1]

अश्क के माता और पिता का भिन्न स्वभाव था। पिता का स्वभाव क्रूर था तो माता सब्र और संतोष की साक्षात देवी ही दिखायी देती है। उनके पिता कहते कि हम जब सच्चाई के रास्ते पर हो और कोई हम पर अन्याय करे तो उसका डट कर विरोध करो। डरना कायरों का काम है। वे शराब के नशे में लड़के ही पैदा करने और उनसे पड़ोसी तथा मुहल्लेवालों से बदला लेने का खुले आम चैलेंज किया करते थे। तो उनकी माता जी पति के अत्याचारों को पूर्व जन्म का कर्म फल समझ कर चुपचाप सह लेती थी। उनमें अत्याचार के खिलाफ लड़ने शक्ति नहीं थी। वह परंपरावादी भारतीय नारी थी। पति को परमेश्वर मानती थी और उनके खिलाफ बात भी करना पाप समझती थी। कभी-कभी माता पर पिता जी के होते हुए अत्याचार को देखकर अश्क जी का खून खौलता था मगर पिता के विरोध कुछ कहने को माता उनको रोकती और पाप का डर दिखाती। अश्क को कई बार माँ के इस स्वभाव का गुस्सा भी आता। अश्क का भी स्वभाव उनके पिता और माता की मिली-जुली देन थी। अश्क पर जब भी कभी अन्याय होता तो उनको पिता के प्रवचन की याद आती और वह भी उस अन्याय का डट कर मुकाबला किया करते।

मृत्यु :

हिन्दी साहित्य जगत के इस महान हस्ती की मृत्यु १९ जनवरी, १९९६ के दिन इलाहाबाद स्थित "स्वरूप रानी नेहरू" अस्पताल में हो गयी।

संघर्ष ही अश्क का दूसरा नाम है। एक निम्न मध्यवर्गीय परिवार में जन्म लेकर वे स्वाभिमान के प्रतीक रहे हैं। अश्क ने बचपन से ही संघर्ष किया है। घर में पिता का आतंक, मार-पीट, झगड़ा, गाली-गलोज नित्य का ही तमाशा बन गया था। अश्क जी बचपन से ही स्वप्न जीवी थे। कभी अध्यापक, कभी लेखक,

---

१ डॉ. अहिबरन सिंह - "अश्क" का कथा साहित्य - पृ. १२

संपादक तो कभी वक्ता, वकील और अभिनेता डायरेक्टर आदि बनने के स्वप्न देखा करते। बचपन की चिर अभिलाषा कुछ हद तक पूरी भी हुई मगर अंत में अपने आप को उन्होंने साहित्य सृजन की सेवा में झोंक दिया। अश्क जी एक सफल साहित्यिक बन गये। उन्होंने साहित्य सेवा करके अपना अक्षयी कीर्तिमान स्थापन कर दिया है। अश्क जी हिन्दी साहित्य के ज्ञान सागर में हमेशा चमकते रहेंगे।

अश्क जी का सृजन :

अश्क जी के उपन्यास निम्न मध्य वर्ग का आईना है। उन्होंने अपनी लेखन की प्रेरणा, निम्न मध्ये वर्ग, आस-पास का परिवेश, मुहल्ला आदि से पायी है। उन्होंने समाज के मध्यमवर्ग तथा निम्न मध्य वर्ग का सूक्ष्म निरीक्षण एवं यथार्थ जीवनानुभव लेकर हिन्दी उपन्यास में पदार्पण किया। अश्क जी में निम्न मध्य वर्ग की जीवन-रीति, विचार एवं विभिन्न प्रकार की कुण्ठाओं और अनेक प्रभावों को परखने की अपूर्व क्षमता है। आधुनिक लेखकों के समान अश्क जी में आत्मश्लाघा और अहंकार की कमी नहीं थी। फिर भी अपने उपन्यासों को तथा अपने को बहुत कुछ तटस्थ रख सके हैं।

उनकी उड़ान केवल उपन्यासों तक ही सीमित नहीं बल्कि हिन्दी साहित्य विधा के हर अंग को उन्होंने स्पर्श किया है। उन्होंने साहित्य के हर विधा में अपनी सिद्धहस्तता का परिचय दिया है। उन्होंने कहानी, नाटक, एकांकी, काव्य, संस्मरण आदि क्षेत्र में भी अपनी लेखनी चलायी है।

अश्क जी ने अपने उपन्यासों में यथार्थता को ही प्रमुखता दी है। उन्होंने ठीक ही कहा है - "मैं सदा इसबात की कोशिश करता हूँ कि अनुभूतियों की सच्चाई और खरेपन तथा कला और शिल्प की सौष्ठवता के साथ अपने वर्ग और समाज का चित्रण करूँ।समाज हित और कल्याण के लिए मेरी कृति आज से सौ वर्ष बाद जिन्दा रहेगी या नहीं इसकी चिंता मैं नहीं करता।"[१]

---

१ उपेन्द्रनाथ "अश्क" : ज्यादा अपनी कम परायी - पृ.९५

साथ ही उसका यह भी कथन है कि "बिना जिन्दगी के यथार्थ को जाने बिना अपनी धरती और अपने परिवेश को पहचाने, उन शिखरों पर पहुँचना कठिन है, तो हमने जिंदगी की उन घाटियों को जहाँ रहते थे देखा, नापा और उनका चित्राण किया।"[1]

अश्क जी ने साहित्य-सृजन को ही अपना एकांगी धर्म माना और अंत तक इसके प्रति एकनिष्ठ भाव से इमानदार रहे हैं। मानव आत्मा की महानता ही व्यक्तित्व की विशालता है। इस माने में वे एक उदाहरण हैं।

अश्क जी को समय-समय पर केन्द्र तथा राज्य सरकारों ने पुरस्कृत कर सम्मानित किया। उनकी लगभग एक दर्जन पुस्तकें पुरस्कृत हो चुकी हैं जिनमें, "साहब को जुकाम आता है", "चरवाहे", "शहर में घूमता आईना", "हिन्दी कहानी और फैशन", "सड़कों पर ढले साये", "सत्तर श्रेष्ठ कहानियां", "कहानी लेखिका और जेहलम के सात पुल", "पत्थर-अलपत्थर", "शिकायते और शिकायते", "बड़ी-बड़ी आँखें" उल्लेखनिय हैं। सन १९६९ में "संगीत नाटक अकादमी" के रूपमें अश्क जी पुरस्कृत हुए। सन् १९७२ में "नेहरू पुरस्कार" से उन्हें सम्मानित किया गया और रूस जाने का निमंत्रान मिला।

अश्क जी १९५२ "प्रगतिशील लेखक संघ" के प्रयाग अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष बने। सन् १९५६ में "कालिदास जयंती समारोह" में भाग लेने के लिए रूस चले गये। भारत सरकार के आमंत्रान पर अश्क जी सन् १९५८ में आंध्रप्रदेश गये। इस प्रकार अश्क एक सफल साहित्यकार हैं। वे साहित्यिक क्षेत्र में काफी सहिष्णु हैं। उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि किसी भी कृति का मूल्यांकन करते समय बिना पक्षपात के सही निर्णय देते थे। सहिष्णुता और असहिष्णुता के बीच उनका व्यक्तित्व और ईमानदार पाठक का भी है।

१ अश्क : हिन्दी कहानी - एक अंतरंग परिचय - पृ. ३५१

* अश्क जी के उपन्यासों का संक्षिप्त में परिचय *

`सितारों के खेल` [सन् १९४७]

उपन्यासकार "अश्क" का `सितारों के खेल` यह पहला उपन्यास है। यथार्थवादी शैली में लिखा यह लगभग २३६ पृष्ठों का रोमांटिक उपन्यास है। उनका यह पहला उपन्यास होते हुए भी पहले प्रयत्नों के दोषों से सर्वथा मुक्त दिखायी देता है। किसी रोमांटिक कहानी की तरह आरंभ से अंत तक पाठक को बांध लेने में सफल हुआ है।

"सितारों के खेल" इस उपन्यास का आरंभ कालेज में वाद-विवाद का विषय है - "वैवाहिक-पद्धति पर पूर्वीय और पाश्चात्य दृष्टिकोण" पर। इस प्रतियोगिता में भाग लेने वालों में प्रमुख पात्र हैं लता, जगत और बंसीलाल। लता और जगत भारतीय संस्कृति और उसके अनुसार नैतिकता की नींव पर स्थापित पुरातन वैवाहिक आदर्शों का समर्थन करते हैं। लता के विचारों का जगत जोदार समर्थन करता है। मगर बंशीलाल तो लता और जगत के विपक्ष में अपने विचार व्यक्त करता है। साथ ही साथ जगत पर व्यंग्य भी कसता जिसके कारण लता नाराज होती है। मगर जगत के झूठे आडम्बर पर लता रीझ जाती है। और अपने को जगत के झूठे प्रेम में खो देती है। लता के पिता जब उसका ब्याह जगत से करना चाहते हैं तो जगत अपना असली रूप प्रकट करता है।

तो इधर बंसीलाल रात के अंधेरे में नल की पाईप के सहारे चोरों की भांति, तीन मंजिल मकान पर चढकर आता है। लता के सामने सच्चे प्रेम की याचना करता है। लता का अस्वीकार सुनकर वह निराश होता है और उपर से छलांग लगाकर अंग-भंग कर देता है। जब लता को बंशीलाल के सच्चे प्रेम का पता चलता है तब तक बहुत देर होती है। लता बंसीलाल को डॉ. अमृतराय के साथ इलाज करवाने के हेतु हरिद्वार ले जाती है। मगर अंत में असफलता के कारण लता द्वारा बंसीलाल को जहर दिया जाता है। लता डॉक्टर अमृतराय के प्रेम में पड़ जो जाती है पर बंसीलाल की बहन राजरानी के कारण उस प्रेम को त्याग कर संसार से चली जाती है।

उपेंद्रनाथ "अश्क" जी के इसी उपन्यास का उद्देश्य स्वतंत्र प्रेम की अपेक्षा वैवाहिक प्रेम और भारतीय नारी की महानता का गुण गौरव करता है। इसी में अश्क जी को पूर्ण सफलता मिली है।

"गिरती दीवारें" [सन् १९४४]

अश्क जी ने "गिरती दीवारें" उपन्यास के बारेमें उसकी भूमिका में कहा है - "गिरती दीवारें" शरबत का गिलास नहीं कि आप उसे एक ही घूँट में कण्ठ के नीचे उतार लें। काफी के तल्ख प्याले की तरह आप को उसे घूँट-घूँट पीना होगा। पर काफी की तल्ख-शीरीनी [कटु-मिठास] का जो शख्स आदि हो जाता है, वह फिर शरबत की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखता।

"गिरती दीवारे" उपन्यास से ही नायक चेतन कडी के उपन्यासों का आरंभ होता है। इस उपन्यास में नायक चेतन के यौवन-काल का जीवन चित्रित किया है। वैसे ही उसके जन्म से लेकर किशोरावस्था तक की सभी अवस्थाओं का चित्राण हुआ है। नायक के चरित्र-चित्रण की दृष्टि से उसके आरंभिक काल का चित्राण अपने में महत्त्वपूर्ण है। यहीं से ही अश्क ने यथार्थवादी परंपरा के उपन्यासों का आरंभ किया है। अपना और अपने पूरे परिवार का चित्राण नायक चेतन को माध्यम बनाकर चित्रित किया है। साथ ही गली, मुहल्ला और उसके आस-पास के निम्न मध्य वर्गीय समाज का चित्राण भी यहाँ अपने-आप में विशेष महत्व रखता है। समाज और समाज में घटनेवाली घटनाएँ वहाँ महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। उसका मुहल्ला, जात-पाँत, भेद-भाव, अशिक्षा, अनाचार, गरिबी, भूख, शोषण आदि अनेक सामाजिक बातों का महत्त्वपूर्ण विश्लेषण इस उपन्यास में हुआ है। चेतन और कुन्ती का असफल प्रेम, नीला को चाहते हुए भी शादी मात्र चंदा से हो जानी। नीला का अनमेल विवाह पाठक तक को दु:खी कर उनके मन में एक कसक पैदा करती है। चेतन भी इस प्रसंग से प्रेरित होकर भावनापूर्ण चित्राणद्वारा निम्न मध्य वर्ग की सिसकियाँ सुनकर सामाजिक आर्थिक विषमता से युक्त दीवारों को गिराने में प्रयत्नशील होता है।

"शहर में घूमता आईना" [सन् १९६३]

"शहर में घूमता आईना" उपन्यास "गिरती दीवारे" की अगली कडी है। इस उपन्यास का नायक चेतन ही हैं। अपनी प्रेमिका तथा साली नीला का ब्याह रंगून के एक अधेड विधुर मिलिट्री एकाऊंटेण्ट से होने के कारण चेतन दु:खी हो जाता है। और इस घटना क्रम का जिम्मेदार अपने आप को ही समझता है।

अश्क जी ने इस उपन्यास को तीन परिच्छेदों में विभाक्त किया है, सुबह, दोपहर और शाम। सुबह जब चेतन नींद से जगता है तो बेहद दु:खी है। अपनी पत्नी चन्दा के निकटता से बचने तथा साली नीला के गम को भुलाने के लिए वह सुबह ही घर से बाहर निकलता हैं। मित्र अनंत को जगाकर उसके साथ बाहर होता हैं। अमीचन्द के डिप्टी कलेक्टर बनने की बात उसको समझ जाती है। वहाँ से बद्दा तथा उसकी माँ की कथा, बाद रामदित्ता हलवाई की रोचकता पूर्ण तथा मन को व्यथीत करनेवाली कहानी। उसके बाद दीनानाथ का जडिये से आनरेरी हकिम बनकर लोगों को ठकाने तथा साल को एक बच्चा पैदा करने की कहानी। चाचा चूनीलाल तथा उसके बेटे फल्गुराम और शहर के दूसरे पागलों की कथा। कवि "हुनर", मित्रा निश्तर और साले रणावीर से भेंट। दोपहर में खालसा होटल में देबू, जगना, बिल्ला से और उनकी गुण्डाई की कहानी। पिता के चार प्रकार के मित्र। महात्मा बांशीराम और ढोंगी जालंधरी मल "योगी" से भेट। लाल बादशाह की कहानी। भागो तथा आनन्दो परिवार कथा और मुहल्ले में होनेवाले ब्राहमणों तथा स्त्रीयो का जान लेना संघर्ष। सहपाठी अमरनाथ से भेट। बाद पिता के जोश पूर्ण आवाहन आदि। अंत में थक हारकर पत्नी चन्दा से दूर भागने की कोशिश करने के बावजूद भी उसी के ही आगोश में शांति पाना।

"शहर में घूमता आईना" यह उपन्यास तैरबीन सा ही आभास देता है। कथा वस्तु का आपस में मेल नहीं है। जालंधर शहर तथा कल्लोवानी मुहल्ला और वहाँ के निम्न मध्य वर्ग का चित्राण है। वे कुण्ठा, निराशा, घुटन, तथा वैषम्य के उस तावावरण में अपने को मिश्रित पाते हैं। जहाँ दम घुट रहा है और

वे निरुद्देश्य भटकते हुए दिखायी पडते हैं। वे हीनता और कामांधता से ग्रसित है। इन वास्तविक दृश्यों को असामान्य मनोदशाओं ने उपन्यास को अवांछित विस्तार दे दिया है। उसका नायक चेतन उपन्यासकार के इशारों पर नाचती हुई कठपुतली बन गया है।

"बड़ी बड़ी आँखें" [सन् १९५५]

"बड़ी बड़ी आँखें" आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया उपन्यास है। यह अश्क जी का चौथा उपन्यास है। इस उपन्यास का कथानक सुगठित है। उपन्यास का वातावरण उपन्यासकार की अन्य कृतियों से कुछ विपरीत सा ही है। इस उपन्यास का नायक संगीत सिंह है जो अपनी प्रिय पत्नी की मृत्यु हो जाने के कारण बेचैन और अशांत है और शांति पाने के हेतु देवनगर आया है। यहाँ वह उद्देश्य की उच्चता, वातावरण की स्वच्छता, कलाकारिता और समाजसेवा की लगन के साथ देवसेना की बढ़ती हुई सरगर्मियों में ही अपने को लगा लेता किन्तु यहाँ तो उसे विपरीत अवस्था से गुजरना पडा। शांति के जगह मन को कचोटती हुई अशांति ही मिल जाती हैं। इसे ही भाग्य की विडम्बना भी कह सकते हैं। उपन्यास का घटना क्रम नायक संगीत सिंह की आत्मीकता में घुल-मिलकर तथा आवेश के साथ उसकी स्मृतियाँ पूर्ण कथा के माध्यम से पूरी उभरी है।

देवनगर के संस्थापक, "देववाणी" पत्रिका के सम्पादक और देवसेना के अधिष्ठाता देवाजी नामक व्यक्ति है। उपन्यास का कथानक जैसे-जैसे आगे बढ़ने शुरू होता है वैसे-वैसे पाठक देवजी के व्यक्तित्व से प्रभावित होने लगता हैं। उनका व्यक्तित्व स्वप्न-द्रष्टा के रूप में प्रकट होता हैं। उन्होंने लिखे हुए लेखों और दिए हुए भाषणों से ही यही आभास निर्माण होता है कि यदि धरती पर कहीं स्वर्ग है तो वह "देवनगर" में है। मगर कथानक के आगे बढ़ने पर देवाजी के "कथनी" और "करनी" में जो पर्याप्त अन्तर है वह अपने-आप ही पाठक के सामने आता है।

वाणी देवनगर के संचालक की बेटी है। बड़े दिन की शाम को आयोजित सभा में वाणी संगीत सिंह के पास वाली कुर्सी में बैठती है तो अपने पिता, चचेरे भाई एवं तीरथराम को आश्चर्य होता है। सबसे ज्यादा वज्र-आघात तीरथराम को होता है। क्योंकि वह दो बच्चों का पिता होते हुए भी उसके मन में वाणी को पाने की लालसा है। तीरथराम खल प्रवृत्ति का पात्र है। यह वाणी और संगीत सिंह को हर प्रकार से बदनाम करने का काम करता है।

"बड़ी बड़ी आँखें" उपन्यास अपने-आप में एक अद्वितीय कृति बन गया है। जो अत्यल्प और सीमित कथानक के होते हुए भी जीवन चित्र में किस प्रकार से अनेक आकर्षक और सुन्दर रंग भरे जा सकते हैं, इसकी एक अत्यन्त सुखद और आश्चर्य पूर्ण अनुभूति पाठक को इस कृति से मिल जाती है।

"पत्थर अल पत्थर" [सन् १९५७]

"पत्थर अल पत्थर" अश्क जी का पाँचवाँ लघु उपन्यास है। यह यात्रा शैली में लिखा उपन्यास है। इसका वातावरण कश्मीर का है। इसका नायक भी कश्मीर का घोड़ेवान हसनदीन है जो भोला-भाला, आस्तीक और दिवास्वप्न देखनेवाला व्यक्ति है। कश्मीर के सौन्दर्य वर्णन के साथ-साथ नायक हसनदीन की त्रासदी भी पाठक के सम्मुख उभर कर आती है।

खन्ना साहब, जो अपने आप को अमीर कहलानेवाले सफेद-पोश का ओछापन भी बड़े आकर्षक ढंग से प्रकट हो गया है। यह खन्ना साहब पाठकों के घृणा का पात्र बन गया है। यहाँ पर अश्क जी का तात्पर्य उन लोगों से है जो अपने-आप को अमीर कहलावेवाले मगर कम से कम व्यय में ज्यादा से ज्यादा आनंद पाने की कोशिश करनेवालों के कमीने पन का यहा पर पर्दा फाश किया है। साथ ही हसनदीन के भोले पन और अस्तिकता का लाभ उठानेवाले अफसर हरनाथसिंह और करीमखाँ तथा रैना आदि के प्रति भी अपना रोष प्रकट किया है। हसनदीन से

सत्रह रुपये लेकर आठ रुपये उन्होंने उपर के अफसरों को भेज दिए तथा बाकी के आपस में बाट लिये। मगर फिर भी हसनदीन के बीवी को और पचास रुपये ले आने को कहते हैं।

इस उपन्यास में उपन्यासकार की व्यंग्य एवं हास्य शैली की विशेषताएँ बखूबी दिखायी देती हैं, जिस का परिचय पाठकों को इस उपन्यास में सहजता से हो जाता है। व्यंग्य इतना गहरा हो गया है कि वह उपन्यास की पृष्ठ-भूमि में पूर्ण रूप से लक्षित हो जाता है।

" गर्म राख " [सन् १९५२]

अश्यक जी के बृह् उपन्यासों में से "गर्म राख" एक हैं। "गिरती दीवारें" उपन्यास का नायक चेतन है तो "गर्म राख" का नायक जगमोहन है, जो निम्न मध्य वर्ग से संबंधित पात्र है। जगमोहन से सत्याजी प्रेम करती है, तो जगमोहन दुरो से प्यार करता हैं। दुरो हरीश से प्यार करती है। कौन जाने हरीश भी कदाचित और किसी को प्यार करता हो। इन पात्रों के अतिरिक्त अनेक छोटे-छोटे कथा चक्र भी संजोये गये हैं। जिनकी अपनी अलग छाप दिखायी गयी हैं। जिनमें गोपालदास, पण्डित धर्मदेव बेदालंकार, शुक्ला जी, भगतराम सहगल तथा उनकी पत्नी शान्ताजी, कवि चातक और उनकी पत्नी आदि प्रमुख हैं। उपन्यासकार ने नायक विशेष को उतना महत्त्व न देकर अन्य मुख्य कथा-चक्र के माध्यम से बुध्दिजीवी निम्न मध्य वर्ग की विडम्बना को ही साकार रूप से प्रकट करने पर ही जोर दिया गया है। इसके साथ ही इन बुद्धि जीवी के जीवन तथा संघर्ष की कहानी को विविध रूपों में चित्रित करने का प्रयास किया हैं। जीवन यापन करते समय इन वर्गों को समाज में आदर सत्कार पाने के हेतु किस प्रकार की परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है, जिनमें चातक जी, पण्डित धर्मदेव बेदालंकार शुक्ला जी आदि के उदाहरण पाठक को अपने-आप ही स्पष्ट होते जाते हैं।

अश्क जी की यह कृति उनके अन्य कृतियों के तुलना में पर्याप्त मात्रा में भिन्न दिखायी देती है। इसमें नायक के होते हुए भी उनके चरित्र को महत्त्व न

देकर अनेक वर्णनात्मक चरित्रों के माध्यम से सीधे बुद्धि जीवी मध्य वर्ग का चित्रण प्रस्तुत किया गया है जो अपने-आप में विशेष महत्त्व रखता है।

"एक रात का नरक" [सन्]

"एक रात का नरक" इस उपन्यास में अश्क जीने शिमला से दूर पहाड़ी रियासत सी.पी. वार्षिक मेले तथा वहाँ के रंग बिरंगे आकर्षण तथा लेखक को बीना जुर्म किये हुए भी हवालात के अँधेरे भूगृह में एक रात की सैर कराकर घर बैठे ही उस रियासत की वास्तविक दशा तथा शासकों के मनमाने अत्याचारों का वर्णन इतना हुबहू हुआ है कि ऐसा प्रतीत होता है मानो लेखक नहीं पाठक ही उस भूगृह जा बैठा है।

लेखक की बहुत दिन से यह इच्छा थी कि वह एक बार सी.पी. का मेला देखे। शिमला जाने पर उसे मौका भी मिल गया, पार्टी में पण्डित तेजभान भी थे। उन्होंने ही मेला देखने का प्रस्ताव लेखक के सामने रखा था। लेखक ने कभी पहाड़ी मेला न देखा था और न ही वहाँ जाने का सुअवसर उसे मिला था जिससे उस मेले के बारेमें जानकारी हो। लेखक ने सुना था कि वहाँ स्त्रियों की प्रदर्शनी होती है। वहाँ मेले में ही शादी ब्याह के मामले तय हो जाते हैं। आदि अनेक किम्वदन्तियों के कारण लेखक को मेला देखने के लिए औत्सुक्य उत्पन्न करती है, और लेखक को भी जिसका इंतजार था वह मौका अनायास ही मिल गया है।

लेखक लाला जी और उनके मित्रों के साथ सी.पी. जाता है। लाला और उनके मित्र एक जगह बैठकर ताश आदि खेलने में मस्त हो गये। यह अच्छा अवसर समझकर लेखक मेला देखने और पहाड़ी गीत इकट्ठे करने हेतु जिसका लेखक को लगाव भी है, इसी कारण घूमने लगता है। संध्या के समय भूख लगने के कारण लाला जी और दूसरें मित्रों को लेखक खोजता है मगर उन लोगों का पता न लगने के कारण मिठाई खरीदकर खाने लगता है, तब राणा साहब की सवारी मेले की शोभा

बढ़ाने के लिए आती है। उसी समय लेखक का चौकीदार से झगड़ा होता है और लेखक को उसी कारण वहावात में रात्र काटनी पड़ती है। उसके वर्णन तथा वहाँ के कर्मचारियों के अत्याचार की कहानियाँ पाठक के मनमस्तिष्क पर सदा के लिए अंकित हो जाती है।

"एक नन्हीं किन्दील" [सन् १९६७]

अश्क जी का "गिरती दीवारें" उपन्यास के कड़ी में का ही "एक नन्ही किन्दील" है। यह एक बृहत उपन्यास है। यह सात सौ अस्सी पृष्ठ तथा छ: खण्डों में विभाजित है। जिस तरह "शहर में घूमता आईना" उपन्यास में जालंधर के निम्न मध्य वर्गीय समाज को चित्रित किया गया है उसी तरह "एक नन्हीं किन्दील" उपन्यास में लाहौर के मध्य वर्गीय समाज को चित्रित किया गया है। उपन्यास का आरंभ नायक चेतन से ही होता है। शिमला में कविराज रामदास व्दारा चेतन का शोषण होता है और वह जालंधर साली नीला के ब्याह के लिए आता है। नीला का ब्याह एक अधेड़ विधुर मिलिट्री एकाऊंटेण्ट से हो जाने के कारण चेतन अशांत है और उसका जिम्मेदार भी वह आपने-आप को मानता है। उसी अशान्ति में ही वह जालंधर से सीधा लाहौर चला आता है। मगर लाहौर में घर की समस्या के साथ-साथ नौकरी के समस्या का भी सामना उसे करना पड़ता है।

चेतन जब लाहौर आता है तब उसे एक के बाद एक ऐसे अनेक समस्या का सामना करना पड़ता है। संपादक विभाग कहानी उसे लिखने को कहते है मगर पैसे देने के लिए अनाकानी करते है। वहाँ पर एक आम रिवाज प्रचलित था कि पत्नी के होते हुए भी लौंडों से प्यार करना उन लोगों के लिए साधारण सी बात थी। बलोची आदि पात्र इसी श्रेणी में आते है। चेतन से भी ऐसी हरकतों के विषय में गंदी अश्लील मजाक होती हैं। ऐसा दम घुटनेवाला वातावरण था जिससे चेतन अपने को पूर्णतय: मुक्त करना चाहता था। चौधरी ईश्वर दास, जीवनलाल कपूर, पण्डित टेकाराम तथा आजदलाला जश्की आदि को समाज और राष्ट्र को खोकला बनाने वाले कीडों की उपमा देता हैं। इसके साथ ही चेतन

के भाभी की बिमारी तथा कश्मीरी लाल "दाग" का मन को कचोटनेवाला विवरण, चन्दा के पिता की पागल होने की बात, और माँ भी सेठ वीरभान सर्राफ के यहाँ रसोई का काम देखती है उसी सेठ के यहाँ अमीचन्द जमाई होनेवाला है। चेतन के लिए यह सबसे बडी दु:ख दायी घटना है।

अश्क ने "एक नन्हीं किन्दील" उपन्यास डायरी शैली में लिखा है। जो भी सामने आता है और जो भी घटना घटती है, उसे वह अपनी नोट-बुक में लिखना नहीं भूलता । भले ही लेखक ने समाज के यथार्थ बिम्ब को छोटी-छोटी घटनाओं के व्दारा ही पाठकों के सम्मुख रखने का ध्येय रखा हो, इस अनपेक्षित में निश्चय ही अनर्गलता आ जाती है।

"बाँधो न नाव इस ठाँव" [भाग एक] [सन् १९७४]

अश्क जी का "बाँधों न नाव इस ठाँव" उपन्यास "गिरती दीवारें" उपन्यास की अगली कड़ी है। लेखक ने इस उपन्यास को दो भागों में विभाजित किया है। शायद लेखक की यही इच्छा होगी कि नायक चेतन की कथा को इसी में पूर्ण कर दे , किन्तु लेखक इसी में असफल ही दिखायी देता है।

उपन्यास के प्रथम भाग में नायक चेतन तकलीफ और तनाव का सामना करता हुआ इस स्वार्थी समाज में जैसे-तैसे अपनी जिन्दगी गुजार रहा है। वह समाज की कुरीतियों को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करना ही अपना कर्तव्य समझ रहा है।

जीवनलाल कपूर से बेबनाव के कारण चेतन "भूचाल" की नौकरी से त्याग पत्र दे देता है। चेतन की नजरों में महाशय जीवनलाल निहायत फूहड और कमीना आदमी है। नौकरी छूट जाने के कारण चेतन की हालात एकदम पतली हो जाती है। वहाँ से आने के बाद कवि रामदास के पास जाता है। वहीं भी निराशा ही हात आती है। वह कवि चातक जी के पास जाता है। मगर चातक अपनी नयी कविता, "सहोदारा" और प्रेमिका निम्मो में डूबा हुआ ही दिखता है। जो उसे बहन-बहन कहते हुए अंक में ले भरता है। वहाँ से भाई साहब

के पास जाता है पर निराशा ही हाथ मिलती है। घर आकर चारपाई पर लेट जाता है कि तभी अचकन-पोश निलामकर दो रुपये दे जाता है। उन्हीं दो रुपये के विलायती रुमाल खरीद कर अनारकली में बेचने लगता है कि सब-जज होने का ख्वाब देखता है। बाद में धर्मदेव बेदालंकार तथा "पण्डित रत्न" से भेंट हो जाती है। चेतन को पण्डित रत्न चुन्नीभाई के यहाँ से अनुवाद का काम दिलवाते हैं। बाद "मस्ताना योगी" के मालिक तथा सम्पादक से चेतन को काम दिलवाते हैं। बाद में पण्डित रत्न चेतन को "लिट्रेरी लीग" जैसी संस्था खोलने की सलाह देते है और सहायता भी करते हैं जिसमें चेतन को सरपरस्तों को बनाते समय अच्छे बुरे का अनुभव आ जाता है। चेतन लाला हकिमचन्द से मिलकर उन्हें सोसायटी का सरपरस्त बनने के लिए बाध्य करता है। मगर लाला हकिमचन्द सरपरस्त बनने से इन्कार करते है और कहते है कि वे पाँच महीने के लिए शिमला जा रहे हैं। हाँ वे अपनी बेटी के लिए एक हिन्दी ट्यूटर अवश्य चाहते हैं। जिसे वे अपने साथ ले जाकर चालीस रुपये महीना देना चाहते थे। यह सुनकर चेतन ही शिमला ट्यूटर बनकर जाने को तैयार हो जाता है और कोशिश करके उसमें सफलता भी पाता हैं। भाई साहब चेतन को ट्यूशन लेने से मना करते हैं मगर चेतन नहीं मानता। अंत में सोसायटी का सभी काम "हुनर" साहब को सौंपकर चेतन शिमला जाने की तैयारी में जुट जाता है। चेतन के सामने अब एक ही सपना होता है कि वह शिमला से ट्यूशन समाप्त कर वापस आकर "लॉ" पास करके सब-जज बनने का।

अश्क जी ने चेतन का चरित्र-चित्रण करते समय तात्कालीन उच्च, मध्य एवं निम्न मध्य वर्ग का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है। उनमें सूफी हनुमान, जगदीश सिंह आदि ऐसे पात्र है जो सोसायटी के सरपरस्त बनकर लाभ एवं मनोरंजन को प्राप्त करना चाहते हैं। इस प्रकार सोसायटी के रूप में चेतन समाज के उच्च और मध्य वर्ग का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करता है।

"बाँधो न नाव इस ठाँव" [भाग - दो] [सन् १९७४]

इस उपन्यास के दूसरे भाग का आरंभ रेल्वे स्टेशन के प्लेट फार्म पर होता है। चेतन को लाला हकिमचन्द की लड़की चन्दा की ट्यूशन मिलने के कारण

वह लाला हकिमचन्द और उनके परिवार के साथ शिमला जा रहा है। शिमला जाने से पहले चेतन ट्यूशन मिल जाने के कारण बहुत खुश था मगर वहाँ जाकर और उसे चन्दा को पढाते समय बहुत दु:ख सा होता है कि वह पढ़ाई में ध्यान नहीं देती और बेमतलब की बहस करती रहती है जिसके कारण उसे कभी-कभी अपने-आप पर का संयम छूटने का डर सा लगता है। चेतन अब अपने-आप पर चिढ़ता है कि उसने भाई साहब की बात नहीं मान ली। लाला हकिमचन्द और उनके साथी क्लार्कों के गंदे और अश्लील तथा भौंडे मजाक से उसे चीढ़ सी उत्पन्न होती है। चेतन ट्यूशन छोडकर वापस जाने की कोशिशा करता रहता है। मगर उसमें भी असफल हो जाता है। सी.पी. का मेला देखते समय चेतन पर आफत आती है और उसे एक रात भूगृह में गुजारनी पड़ती है। जहाँ सील, पिस्सुओं साँप तथा बिछुओं का रात भय के शिवाय कुछ नहीं मिलता। उपर से बीना गलती के सजा तथा अपमान सहन करना पड़ता है। अंत में चन्दा के दादा आने के बाद चेतन चन्दा से ट्यूशन छोड कर जाने की बात करता है, तो दादा जी हकिमचन्द को कहकर चेतन का अपमान करते है, बाद में क्षमा मांगते हैं लेकिन अस्सी में से साठ रुपये ही देते हैं। चेतन अपने रुपये दो तरपरोस्तों से वसूल करता है मगर उसका मन उसे बाद में कोसता है कि उसने अपनी मेहनत के रुपये लाला से ही लेने थे, दूसरों को क्यों ठगा ?

अश्क जी ने यह उपन्यास को लिखकर "गिरती दीवारें" की चेतन के कथा को इस शृंखला की चौथी कड़ी में गूंथने का यत्न किया है, किन्तु वे पूर्ण रुपसे सफल नहीं हो सके। चरित्रांकन की भूमिका पर वे असफल ही रहे हैं। उनके आधे से ज्यादा बेमतलब के प्रसंगों ने उपन्यास की चमत्कारिकता को नष्ट कर दिया है और कथानक को कुछ बोझिल सा बना दिया है।

"निमिषा" [सन् १९८०]

अश्क जी का "निमिषा" उपन्यास सन १९८० में प्रकाशित हुआ है। पृष्ठों की संख्या ३१७ हैं। इस उपन्यास में अश्क जी ने अपने आप का चरित्र-चित्रण किया है। इस उपन्यास की नायिका "निमिषा" दूसरी कोई नहीं बल्कि अश्क जी की तिसरी पत्नी कौशाल्या अश्क ही हैं और नायक गोविन्द ही अश्क जी है।

यह उपन्यास पारिवारिक है। इस में पूर्ण रूप में पारिवारिक संघर्ष को ही प्रधानता दी गयी है।

उपन्यास की नायिका "निमिषा" बचपन में माता और पिताजी की मृत्यू के कारण अनाथ होकर इस मामा के घर से उस मामा के घर भेज दी जाती है। अंत में तंग आकर वह अपने चाचा को पत्र लिखती है और चाचा एक दिन आकर उसे ले जात है। चाचा के घर "निमिषा" की पढ़ाई आराम से चल रही थी मगर इस बीच चाचा का ब्याह हो जाता है। चाची और निमिषा की बनती नहीं इसी कारण चाची के बेबनाव हो जाता है। चाची और चाचा निमिषा पर नाराज हो जाते हैं। तब निमिंषा चाचा का घर छोडने को तैयार हो जाती है। मगर मिसेस शार्मा के सलाह के फलस्वरूप वह चाचा-चाची और हालात से समझोता करती है। एक दिन वह अपनी सहेली कनक के साथ मुशायरे में जाती है। सहांपर नायक गोविन्द का एक दर्दभरा शेर सुनती है। सहेली कनक से उसे गोविन्द के बारे में जानकारी प्राप्त होती है कि उसके पत्नी की मृत्यू हो गयी है और वह एक शायर है। निमिषा गोविन्द की ओर बरबस खिंची चली जाती है। वह उसे मिलकर अपने दिल की एक बात करना चाहती है मगर मौका नहीं मिलता।

निमिषा का बी.ए. का परिणाम घोषित हो जाता है और वह साधारण: पास हो जाती है। टीचर की जगह के लिए वह आवेदन भी भेज देती है मगर कहीं से भी जल्दी जबाब न मिलने के कारण कुछ अधीर भी होती है। थोडे इंतजार के बाद उसे दो जगह से बुलावा आता है। वह रेनला जाना पसंद करती है क्योंकि उसे अपनी चाची से दूर जाना था। वह एक दिन गोविन्द से मिलने उसके घर भी जाती है तब उसे पता चलता है कि वह नोकरी के सिलसिले में देवनगर गया है। निमिषा गोविन्द का पता उसके भाई से लेकर उसे खत लिखती है और गोविन्द के पत्नी की मृतू के बारे में संवेदना भी व्यक्त करती है। इसी तरह गोविन्द और निमिषा प्रथम पत्र के माध्यम से एक-दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं और शादी भी करना चाहते हैं मगर गोविन्द एक

स्कैण्डल से बचाने के लिए वह भाई से कहलवाके एक जगह सगाई करायी है। गोविन्द निमिषा के सामने आर्य समाज मन्दिर में चुपके से शादी करने का प्रस्ताव भी रखता है मगर निमिषा उसे अस्वीकार कर देती है। मजबूर होकर गोविन्द नियोजित वधू से ब्याह करता है। गोविन्द की नवपरिणीता माला कुछ कुरूप, लड़ाकू और कामसू प्रवृत्ति वाली होने के कारण दोनों में बेबनाव आ जाता है। अंत में माला से तंग आकर गा गोविन्द अपनी नोकरी तक छोड़कर उससे छुटकारा पाने के हेतु बंगलोर की ट्यूशन को स्वीकार करता है। मगर उनकी नियोजित शादी होने के बाद निमिषा के पत्रव्यवहार तक बंद हो गया था। बंगलार जाने के पहले वह निमिषा को पत्र लिखर दिल की सब बाते कहना चाहता है। आखीर वह निमिषा को ही चाहता है। उसका अन्तर्मन उसे पुकार रहा है - निमिषा .... निमिषा ..... । और यहीं पर उपन्यास समाप्त हो जाता है।

नाटक :

		प्रकाशन
१]	जय-पराजय	[१९३७]
२]	स्वर्ग की झलक	[१९३८]
३]	छठा बेटा	[१९४०]
४]	कैद	[१९४५]
५]	उड़ान	[१९४३-४५]
६]	पैंतरे	[१९५२]
७]	अलग-अलग रास्ते	[१९४४-५३]
८]	आदर्श और यथार्थ	[१९५४]
९]	अंजोदीदी	[१९५३-५४]

एकांकी :

		प्रकाशन
१]	पापी	[१९३८]
२]	लक्ष्मी का स्वागत	[१९३९]
३]	जोंक	[१९३८]
४]	पहेली	[१९३९]
५]	वेश्या	[१९३८]
६]	अधिकार का रक्षक	[१९३८]
७]	चमत्कार	[१९४०]
८]	बहने	[१९४२]
९]	मैमूना	[१९४२]
१०]	चुम्बक	[१९४३]
११]	भँवर	[१९४३]
१२]	पक्का गाना	[१९४४]
१३]	आपस का समझौता	[१९३९]
१४]	विवाह के दिन	[१९४०]
१५]	देवताओं की छाया में	[१९४०]
१६]	खिड़की	[१९४०]
१७]	सूखी-डाली	[१९४०]
१८]	नया पुराना	[१९४०]
१९]	कामदा	[१९४२]
२०]	चिलम	[१९४२]
२१]	तौलिये	[१९४३]
२२]	आदिमार्ग	[१९४३]
२३]	तूफान से पहले	[१९४६]
२४]	काइसा साहब कहसी आया	[१९४६],
२५]	अँधी गली में आठ एकांकी	[१९४९]

		प्रकाशन
२६]	पर्दा उठाओ पर्दा गिराओ	[१९५०]
२७]	बतासिया	[१९५०]
२८]	कस्बे के क्रिकेट क्लब का उद्घाटन	[१९५०]
२९]	मस्के बाजों का स्वर्ग	[१९५०]
३०]	साहब को जुकाम हैं - १९५४ से १९६० के एकांकी	

कहानियाँ :

१९३२ से १९३६ के रचनाकाल में "अंकुर", "नासुर", "चट्टान", "टाची", "पिंजरा", "गोखरू", "बैंगन का पौधा", "मेमने", "बालिये", "कालेसाहब", "बच्चे", "उबाल", कैप्टन रशीद", आदि अश्क जी की प्रतिनिधि कहानियाँ हैं।

कथा संग्रह :

		प्रकाशन
१]	प्रात: प्रदीप	[१९३७]
२]	उर्मिया	[१९३८ से १९४१]
३]	बरगद की बेटी	[१९४९]
४]	दीप जलेगा	[१९५०]
५]	चाँदनी रात और अजगर	[१९५२]
६]	सड़कों पर ढले साये	[१९५३ से १९६०]
७]	खोया हुआ प्रभा मंडल	[१९६१ से १९६५]
८]	एक दृश्य नदी	[१९६३]

संस्मरण :

		प्रकाशन
१]	मंटो मेरा दुश्मन	[१९५६]

निबंध, डायरी और विचार ग्रंथ :

		प्रकाशन
१]	ज्यादा अपनी कम परायी	[१९५०]
२]	रेखाएँ और चित्र	[१९५८]

संपादन :

	प्रकाशन
प्रतिनिधि एकांकी	[१९५०]
रंग एकांकी	[१९५६]
संकेत	[१९५६]

अनुवाद :

ऐंटन ये खोव के लघु उपन्यास का अनुवाद "ये आदमी ये चूहे" [१९५०], स्टीन बैक के प्रसिद्ध उपन्यास - "आय माइस एण्ड मैन" का "हिज एक्सेलेन्शी" [१९५०], अमर कथाकार दास्तोव्हस्की के लघु उपन्यास "डर्टी स्टोरी" का हिन्दी अनुवाद आदि ।

निष्कर्ष :

संघर्ष ही अश्क जी का दूसरा नाम है। अश्क जी ने सचमुच अपने संपूर्ण जीवन में खूब संघर्ष किया है। उनके जीवन में अनेक चढ़ाव-उतार आये। उनमें

ज्यादातर उतार ही दिखायी देते हैं। बचपन में पिता की घौंस बात-बात पर गाली-गलोज और मार-पीट सहनी पड़ती थी। पिताजी जब भी घर आते तो हमेशा शराब पीकर हंगामा मचा देते। उनका बचपन अभाव में बिता। उन्होंने बचपन से ही अनेक स्वप्ने देखे थे, अध्यापक बनना, लेखक, वक्ता, संपादक, अभिनेता, वकील, निर्देशक आदि-आदि बनना चाहा। कुछ हदतक उनकी बचपन की चिर अभिलाषा पूर्ण भी होती दिखाई देती है। साथ ही उन्होंने अखबार के ऑफीस में हमेशा रात की नौकी की उसके कारण उनकी सेहत चौपट हो गयी। उसका असर उनको आगे चलकर यक्ष्मा की बीमारी के रूप में भुगताना पड़ा। मगर अश्क आपने जीवन से हारे नहीं। अश्क जी अपनी जिंदगी से हमेशा झगड़ते रहे। वह कभी ट्युशन लेकर तो कभी रास्ते पर अखबार बेचकर अपना जीवन जैसे तैसे बिताया। आपने पिताजी के दबाव में आकर प्रथम पत्नी से न चाहते हुए भी शादी करनी पड़ी। मगर प्रथम पत्नी के अच्छे स्वभाव ने अश्क के मन में उसके प्रति चाहत उत्पन्न कर दी। यक्ष्मा की लम्बी बीमारी में एक पुत्र के उत्पन्न हो जाने के बाद उसकी मृत्यु हो गयी। दूसरी शादी की मगर बेबनाव के कारण उसे छोड दिया और कौशल्या अश्क से तीसरा ब्याह किया तो एक सफल पत्नी बनकर अश्क जी के जीवन में आयी। अश्क लाहौर आदि शहरों की भटकंती के बाद अंत में अलाहबाद आकर बस गये जहां उन्होंने अपना प्रकाशन शुरू किया और अपने आप को जीवन के अंतिम समय तक साहित्य सेवा में लगा दिया।

अश्क जी ने साहित्य की हर विधा में लेखन किया। कविता, कहानी, नाटक, एकांकी, उपन्यास, संस्मरण, रेखाचित्र, अनुवाद, आदि में अपनी सिद्धहस्तता का परिचय दिया हैं। उन्होंने अपनी एक अमिट छाप उर्दू-हिन्दी साहित्य में बनायी। हिन्दी उपन्यास की विधा में यथार्थता की आड में अपनी ही जीवन कहानी को अनेक बार दोहराया है। उन्होंने सिर्फ पात्रों के नाम बदल दिये मगर पात्र वही दिखायी देते हैं। चेतन नामक पात्र

के उपन्यासों की लाईन ही लगा दी, उनमें "गिरती दीवारें", "शहर में घूमता आईना", " एक नन्ही किन्दील", "बाँधो न नाव इस ठाँव", प्रमुख हैं। साढ़तीन हजार पृष्ठों तक लिखकर भी नायक चेतन अभी जवानी में ही भटक रहा है।

आज अश्क जी इस दुनिया में नहीं रहें। आत्मविश्वास, महत्त्वकांक्षा का पूरक है। ये दोनों गुण अश्क में थें। वे स्वाभिमानी थें। अनाचारों के विरुद्ध लड़ना, अधिकारों के लिए संघर्ष करना उनके व्यक्तित्व का वैशिष्ट्य था। कई बार उनपर अन्याय भी हुआ है मगर उन्होंने अपने हक के लिए जीवन में कड़ा संघर्ष किया है। उनका साहित्य हिन्दी जगत में चिरकाल तक अमर रहेगा।

.....